जनचेतना का प्रगतिशील कथा-मासिक

ISSN 2454-4450

मूल्य ₹ 60

हंस

फरवरी 2025

संपादक
संजय सहाय
•
प्रबंध निदेशक
रचना यादव
•
व्यवस्थापक/सह-संपादन सहयोग
वीना उनियाल
•
संपादन सहयोग
शोभा अक्षर
माने मकर्तच्यान(अवैतनिक)
•
प्रसार एवं लेखा प्रबंधक
हारिस महमूद
•
शब्द-संयोजन एवं रूपांकन
प्रेमचंद गौतम
•
ग्राफिक्स
साद अहमद
•
कार्यालय सहायक
किशन कुमार, दुर्गा प्रसाद
•
मुख्य प्रतिनिधि (उ.प्र.)
राजेन्द्र प्रसाद जायसवाल
•
रेखाचित्र
विकेश निझावन, सुभाष पांडे

कार्यालय
अक्षर प्रकाशन प्रा. लि.
4229/1, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली-2
व्हाट्सऐप : 9717239112, 9560685114
दूरभाष : 011-41050047
ईमेल : editorhans@gmail.com
वेबसाइट : www.hanshindimagazine.in

मूल्य : 60 रुपए प्रति
वार्षिक : 700 रुपए (व्यक्तिगत)
रजिस्टर्ड : 1100 रुपए
संस्था/पुस्तकालय : 900 रुपए (संस्थागत)
रजिस्टर्ड : 1300 रुपए
विदेशों में : 80 डॉलर
सारे भुगतान मनीऑर्डर/चैक/बैंक ड्राफ्ट द्वारा अक्षर प्रकाशन प्रा. लि. (Akshar Prakashan Pvt. Ltd.) के नाम से किए जाएं.

हंस/अक्षर प्रकाशन प्रा.लि. से संबंधित सभी विवादास्पद मामले केवल दिल्ली न्यायालय के अधीन होंगे. अंक में प्रकाशित सामग्री के पुनर्प्रकाशन के लिए लिखित अनुमति अनिवार्य है. हंस में प्रकाशित रचनाओं में विचार लेखकों के अपने हैं. उनसे हंस की सहमति अनिवार्य नहीं है. साथ ही उनके मौलिक या अप्रकाशित होने का उत्तरदायित्व संपादक और प्रकाशक का नहीं है बल्कि यह दायित्व रचनाकार का है.

प्रकाशक/मुद्रक : **रचना यादव खन्ना** द्वारा अक्षर प्रकाशन प्रा.लि., 4229/1, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली-110002 के लिए प्रकाशित एवं चार दिशाएं, जी-39/40, सेक्टर-3, नोएडा- 201301 (उ.प्र.) से मुद्रित. संपादक–संजय सहाय.

फरवरी, 2025

मूल संस्थापक : **प्रेमचंद : 1930**
पुनर्संस्थापक : **राजेन्द्र यादव : 1986**

पूर्णांक-460 वर्ष : 39 अंक : 7 फरवरी 2025

आवरण : वंदना पवार

जनचेतना का प्रगतिशील कथा-मासिक

इस अंक में

संपादकीय
4. नचिकेता होने की नियति-फ्रान्ज काफ़्का : राजेन्द्र यादव ('हंस', दिसंबर 2013)

अपना मोर्चा
9. पत्र

न हन्यते
11. श्याम बेनेगल और हमारा समय : रेखा देशपांडे
14. समानांतर सिनेमा के स्तंभ : श्याम बेनेगल : नीलांशु रंजन
16. ग्लैमर की चकाचौंध से बेपरवाह एक रंगकर्मी : अरुण कुमार कैहरबा

मुड़-मुड़ के देख
18. सिर का साया : दिनेश पालीवाल ('हंस', दिसंबर 1986)

अभी दिल्ली दूर है
24. ये हम हैं जो दिल्ली में फंसे हैं : ममता कालिया

कहानियां
30. कॉर्पोरेटी बिसात : जयनंदन
36. टारगेट : संजय कुमार सिंह
41. डार्करूम : श्रीधर करुणानिधि
51. रेनबो : रेखा राजवंशी
58. एक अभिशप्त रात : ग्वांगजू किम (कोरियाई कहानी) (अनुवाद : विजय कुमार यादव)

ग़ज़ल
86. कुमार विनोद, ब्रिजेश माथुर 89.पवन कुमार

कविताएं
56. पूजा यादव, सुभाष सिंगाठिया
57. निज़ार क़ब्बानी, सुरजीत पातर
72. यश मालवीय

आधुनिक पाश्चात्य दर्शन और साहित्य
68. आधुनिक दर्शन की विकास यात्रा-4 : अशोक कुमार

कथेतर
73. बड़े भाई के नाम दॉस्तोएव्स्की के पत्र : अनुवाद : रूपसिंह चन्देल

लघुकथा
29. मार्टिन जॉन

परख
76. शोध-पड़ताल और साहस से लिखी गई बस्तर की कहानी : उर्मिलेश
80. डरों का डेरा : रश्मि रावत
84. अकेले नहीं हैं आप... : संतोष गोयल
87. सामाजिक विसंगतियों के जीवंत चित्र : मधु संधु
90. एकतरफा दृष्टिकोण का बेबाक विमर्श : आसिफ अली

साहित्यनामा
92. रे मन जाई जहां तोहि भावै : साधना अग्रवाल

रेतघड़ी
96

नचिकेता होने की नियति-फ्रान्ज काफ़्का

राजेन्द्र यादव

''नरक की अतल गहराइयों में सांस लेने वाले ही परम निष्पाप और निश्छल स्वरों में गा पाते हैं. उन्हीं के तो गीत होते हैं, जिन्हें हम ऋषियों और देवताओं की वाणी के रूप में याद करते हैं!'' काफ़्का के एक अप्रकाशित पत्र की ये पंक्तियां, ऐरिख़ हैलर के अनुसार, नीत्शे की ही अनुगूंज हैं : ''जिस किसी ने भी नए स्वर्ग की रचना की है, उसने शक्ति और प्रेरणा अपने भीतर के नरक से ही पाई है!''

लेकिन इन दोनों ही वक्तव्यों में अपने को अतिक्रमित करने की जैसी ध्वनि है, क्या वह काफ़्का की रचनाओं में मिलती है? मुझे तो खुद उसका रचना-संसार एक अजीब दमघोंटू, गहरी अंधेरी गुफा जैसा लगता है, जहां धुंध और धुएं में लोग मानो सोते हुए चल रहे हों, कहीं यातनाएं देने वाली नई-नई मशीनें हैं, तो कहीं कीड़ों और कुत्तों में बदलते हुए इंसान, बीहड़ जंगलों और ऊबड़-खाबड़ पगडंडियों में टक्करें खाता अमीन है, तो गड्ढा खोदकर उसमें छिपा बैठा भयभीत आदमी! विचित्र दुःस्वप्न है, जहां गर्मी से पिघले मोम के पुतलों जैसे लोग और चीजें टूट-फूट कर ऐंठ गए हैं. बाहर और भीतर का सब कुछ उलट-पलट गया है. मारक्विस-द-साद की दुनिया भी रोंगटे खड़े कर देने वाले भयानक नरक की ही तस्वीर सामने लाती है. जैसे आप किसी कसाई-घर, या रवि वर्मा के चित्रों में दिखाए गए कुंभी पाक के बीचोबीच खड़े हैं. मगर वह शरीर और मांस की दुनिया है, और उसमें लोथड़े-हड्डियां, जलते-भुनते और चिरांध भरे कढ़ाव, छुरों और नेजों से छूटते खून के फव्वारे, चीखें-कराहें और अट्टाहास, खुले संभोग और कोड़ों की बौछारें, यही सब भरा है, और इन सबका कर्ता है एक मनमौजी, उच्छृंखल सामंत. काफ़्का के पास 'आत्मा के नरक' की दुनिया है, मगर उसका कर्ता कोई नहीं है. ईश्वर को मारा था नीत्शे ने, और उसकी जगह एक निराकार राक्षस को ला-बैठाया काफ़्का ने. इसलिए उसके यहां हिंसा करने वाला कोई नहीं है. उस हिंसा को भोगने वालों का जमघट है. अगर काफ़्का की रचनाओं में भयानक 'आध्यात्मिक' यंत्रणा और बीहड़ दार्शनिक अर्थवत्ता न होती, तो बड़ी आसानी से उन्हें एडगर एलेन पो की कहानियों के साथ रखा जा सकता था. जहां कहीं अंधेरे-अंधे कुएं में तीखा धारदार चमकता पेंडुलम छाती को खुरचता हुआ हिल रहा है, तो कहीं खूंखार बिल्ली की भूखी आंखें घूरती हुई निकट आती जा रही हैं...काफ़्का के पात्र भी किसी अदृश्य, निराकार और निर्लिप्त सत्ता की चौपड़ पर रेंगते-घिसटते और यंत्रणा पाते लोग हैं. वे पीड़ा देने वाले की प्रत्यक्ष अनुपस्थिति, और व्यवस्था के रूप में निरंतर उपस्थिति के दुहरे पाटों में गहरी मर्मांतक यातना भोगने वाली, पिसती आत्मा की निःशब्द चीत्कारें हैं. मानवीय संबंधों से लेकर किसी दैवी कृपा की आस्था तक छिन्न, मगर भीतरी वास्तविकता के प्रति अतिप्रबुद्ध व्यक्ति के, घुटन-भरे अलगाव के शून्य में जीते हुए, उस तक पहुंचने के लिए इस बीच की खाई या शून्य में होकर ही गुजरना पड़ता है.

अजीब बात है, इस काफ़्काई संसार की युक्ति, चीजों के रूप और संबंधों के तर्क इसी हमारी बाहरी दुनिया से लिए गए. हां, स्थितियां और देशकाल बदल गए हैं, और किसी दूसरे विस्मय-नक्षत्र में पहुंच जाने जैसा लगता है. 'स्वप्न' में चीजों के रूप या आपसी संबंध तो बदल ही जाते हैं. जो कुछ घटता है, उसका कार्य-कारण

जोड़ भी अव्यवस्थित हो जाता है. काफ़्का में ऐसा प्रायः नहीं है. एक स्थिति या सिचुएशन को ले चुकने पर वह सतर्क तार्किकता के साथ उसे विकसित करता है, उसकी परतें खोलता है. सिचुएशन विलक्षण या अभौतिक हो सकती है, मगर उसे बढ़ाने, मोड़ देने और गहरे अर्थों से जोड़ने की प्रक्रिया कहीं कच्ची नहीं है. बाहरी संसार की इसी यथा-तथ्यता को अस्वीकार करने की पद्धति से ही वह मूल्यों की जड़ तक पहुंचता और उन्हें ध्वस्त करता है. हो सकता है जिस विलक्षण, बेहूदा, हास्यास्पद और त्रासद स्थिति की वह सृष्टि करता है, उनमें घिर जाना उसके पात्रों का अपना चुनाव न हो. कहां से आती हैं ये अजूबा स्थितियां? क्यों भोगते हैं उसके पात्र एक विकल्पहीनता की पीड़ा? कौन-सा अपराध है जो उनकी आत्मा को घुन की तरह खाता रहता है? इन्हीं कुछ सवालों की खोज हमें काफ़्का की दृष्टि को कुछ समझने की दिशा दे सकती है!

इसी दृष्टि से काफ़्का की 'मांद' कहानी मुझे बार-बार याद आती है. बाहरी दुनिया से जुड़ पाने में असमर्थ, या वहां कोई संबंध न बना पाने के कारण एक नाम और व्यक्तित्वहीन साहब जंगली एकांत की एक मांद में घुसे बैठे हैं, और निरंतर इसी तिकड़म में हैं कि कैसे खोद-कुरेदकर इस मांद को इतना सुविधाजनक और सुरक्षित बना लें कि न तो कोई वहां तक आ सके और न उन्हें बाहर निकलने की जरूरत रहे. वे राशन-पानी से लेकर मांद के भीतरी आकार तक को ऐसा स्वयं-संपूर्ण बना लेना चाहते हैं कि बिना किसी की भी शक्ल देखे, मजे में इसी बिल में जिंदगी गुजार सकें. इसके लिए मांद के मुहाने को झाड़ी-पत्तों से छिपाने से लेकर आने-जाने में अत्यंत गोपनीयता रखने तक सारी सावधानियां उन्होंने बरती हैं, और अब लगे हैं 'भीतर' का विस्तार करने में, यत्न से प्राप्त इस 'सुरक्षा' को स्थाई करने में...

अंत में वे कहां जाकर टकराते हैं, फिलहाल इस बात को छोड़ दें और दो बातों पर ही ध्यान दें. नाम-रूप से वंचित इस पात्र का व्यक्तित्वहीन होना और किसी भीतरी खोह में जा छिपने का डर, 'बाहर' से अपनी सुविधा की चीजों को भीतर ले जाकर अपने हिसाब से व्यवस्थित कर लेने की प्रवृत्ति, वहीं आत्मनिर्भर और स्वयं-संपूर्ण होकर बाहर-भीतर को समझने की बेचैनी, ये ही हैं काफ़्का की मानसिक बनावट के सूत्र! मांद के साहब बाहर की दुनिया से क्यों भयभीत हैं? क्यों लोगों के संपर्क से डरते और बचते हैं? चोट खाए हुए हैं या आध्यात्मिक धरातल पर किसी भी संबंध में उनकी आस्था ही नहीं रह गई है? आखिर क्यों अपनी भीतरी दुनिया में ही बने रहना चाहते हैं? क्यों बाहरी चीजों को भीतर ले जाकर अपने ढंग से सजाते हैं, और पहेली जैसी स्थिति बनाकर उसका हल या अर्थ खोजने में सिर खपाते रहते हैं? बाहरी डर और भीतरी अंधेरों-एकांत में सुरक्षा पाने की यह जी-तोड़ कोशिश क्या है?

इस मानसिकता को पाने और समझने के सिरे काफ़्का की अपनी जिंदगी में हैं. मुझे कथा-साहित्य में काफ़्का ही अकेला ऐसा लेखक लगता है जिसका सारा लेखन आत्मकथा और आत्मा की कथा, एक ही साथ है. यानी, यहां लेखक की भीतरी बुनावट को जाने बिना आप लेखन को समझने की अंतर्दृष्टि ही नहीं पा सकते. दॉस्तोयेव्स्की और तॉल्सतॉय की जिंदगी उनकी रचनाएं समझने में मददगार है, और कामू-सार्त्र की दार्शनिक दृष्टि के माध्यम से ही उनके कथा-साहित्य के अर्थ निकाले जा सकते हैं. मगर संपूर्ण मानसिकता और जिंदगी के संदर्भ में रचना को सारी अर्थ-संपन्नता प्राप्त हो, यह स्थिति सिर्फ काफ़्का के साथ ही है. अन्य लेखकों की तरह काफ़्का यह नहीं कहता कि उसकी जिंदगी साहित्य के लिए समर्पित है, ''मेरी तो जिंदगी ही मेरा साहित्य है'', उसका बार-बार आग्रह यही है. इसी के लिए वह फ़ैलिस-बाउर से दो बार सगाई तोड़ लेता है और बेहद प्यार करने के बावजूद शादी नहीं करता. ''...अपनी रचनात्मक प्रतिभा को जीने में बरबाद नहीं करना चाहिए'', यह ज्ञान उसे अपनी किसी शारीरिक कमजोरी से आया या संबंधों के मोहभंग से, यह कहना बहुत मुश्किल है. मगर हर सुख-सुविधा और स्वाभाविक जिंदगी से विरक्त होकर तपस्यारत भारतीय ऋषियों का आत्मपीड़क दृष्टिकोण ही काफ़्का को तीखी-गहरी संवेदना में एकाग्र होकर लिखने की प्रेरणा देता है. अधिकांश का विश्वास है कि जिंदगी के इस नकार, या लेखन की सारी आध्यात्मिक-बौद्धिक बनावट के पीछे है, उसका अपने बाप से संबंध!

उसकी एक काफी लंबी रचना है 'पिता के नाम पत्र', यह पत्र शायद कभी पिता को दिया नहीं गया और लेखक की मृत्यु के बाद छपा. इसकी कुछ पंक्तियां गौर करने लायक हैं, ''मेरे पालन-पोषण का आपका जो भयानक, प्रभावशाली मगर शाइस्ता तरीका रहा है उसके प्रभाव ने मुझे एक पल भी चैन से नहीं रहने दिया. गालियां, धमकियां, तानाकशी, जहर-बुझी और तिलमिला देने वाली हंसी, और साथ-साथ ताज्जुब की बात कि आत्मदया भी...लगता है मानो बच्चा अगर मर नहीं गया, तो सिर्फ आपकी दया के कारण ही. जैसे आप ही ने उस जैसे अयोग्य की जिंदगी का वरदान दिया हो! जहां तक मेरा सवाल है, आप मेरे लिए सर्वशक्तिमान थे, और मुझे ऐसा लगता था जैसे आप हर समय इस शक्तिमत्ता को बढ़ाने की ही फिराक में लगे रहते हैं..., जिधर से भी देखो, आप महाबली, परम विराट और दैत्याकार ही लगते थे..., बाद में जिंदगी-भर हम सब एकजुट होकर आपके प्रभाव से ही लड़ते रहे. लेकिन कैसे क्षुद्र और बचकाने तरीकों से...अगर मैं आपसे जान बचाकर घर से भाग गया होता, तो मुझे सारा परिवार, यहां तक कि मां को भी छोड़ना पड़ता..., मेरा सारा लेखन सिर्फ और सिर्फ आपको ही लेकर है...''

हां, बाप के अदम्य आत्मविश्वास, भयानक, सफल और